❀ श्रीः ❀

श्रीमदमृतग्रन्थमालायाः—(४)

चतुर्थं पुष्पम् ।

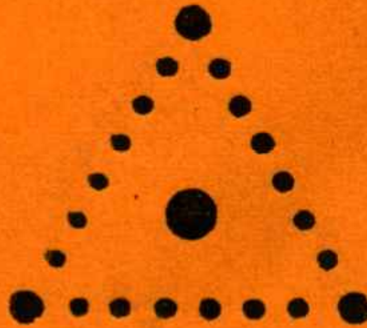
सर्वतन्त्रस्वतन्त्र—

महामहिम-आचार्य—

श्रीमदमृतवाग्भवप्रणीतं

श्रीसप्तपदीहृदयम्

संस्कृत-हिन्दी-इङ्गलिश-रूपान्तरैः सहितम् ।



वि० सं० २०१६ | मूल्यम् रूप्यकमेकम्

प्रकाशकः—

राज पं० श्रीगोविन्द मिश्र

(अध्यक्ष-श्रीस्वाध्यायसदन, सोलन)

चौबुर्जा, भरतपुर (राजस्थान)



पुस्तक प्राप्ति स्थानः—

Private Secretary,

His Highness the Maharaja of Bharatpur

MOTI MAHAL, BHARATPUR

(Rajasthan)

मुद्रकः—

नवयुग प्रेस,

भरतपुर।

श्री

श्रीमदमृतग्रन्थमालायाः चतुर्थं पुष्पम् ।

सर्वतन्त्रस्वतन्त्र

महामहिम-आचार्य

श्रीमदमृतवाग्भवप्रणीतं

श्रीसप्तपदीहृदयम्

श्रीबलजिन्नाथपण्डितप्रणीतया संस्कृतपंजिकया पण्डित श्रीसम्पूर्ण दत्त मिश्र प्रणीतेन भाषाद्वय (हिन्दी, इङ्गलिश) रूपान्तरेण च समलंकृतम् ।

कविपुण्डरीकेण श्रीमता सम्पूर्ण दत्त मिश्रेण लिखितया भूमिकया समुद्भासितम् ।

प्रकाशकः—

मिश्र गोविन्दः

भरतपुरम्

द्वितीय संस्करणम्

सं० २०१६

मूल्य १) रूप्यकमेकम्

अमृतनिभृतशास्त्रं साधु मुद्रापयित्वा
प्रथयति विबुधानां लब्धु कामः प्रसादम् ।
अमलमतिप्रसादीलालपुत्रोऽत्रिगोत्रो
भरतपुरनिवासी मिश्रगोविन्दशर्मा ॥

सूचीपत्रम्

पृष्ठ संख्या



उपहार-पत्र

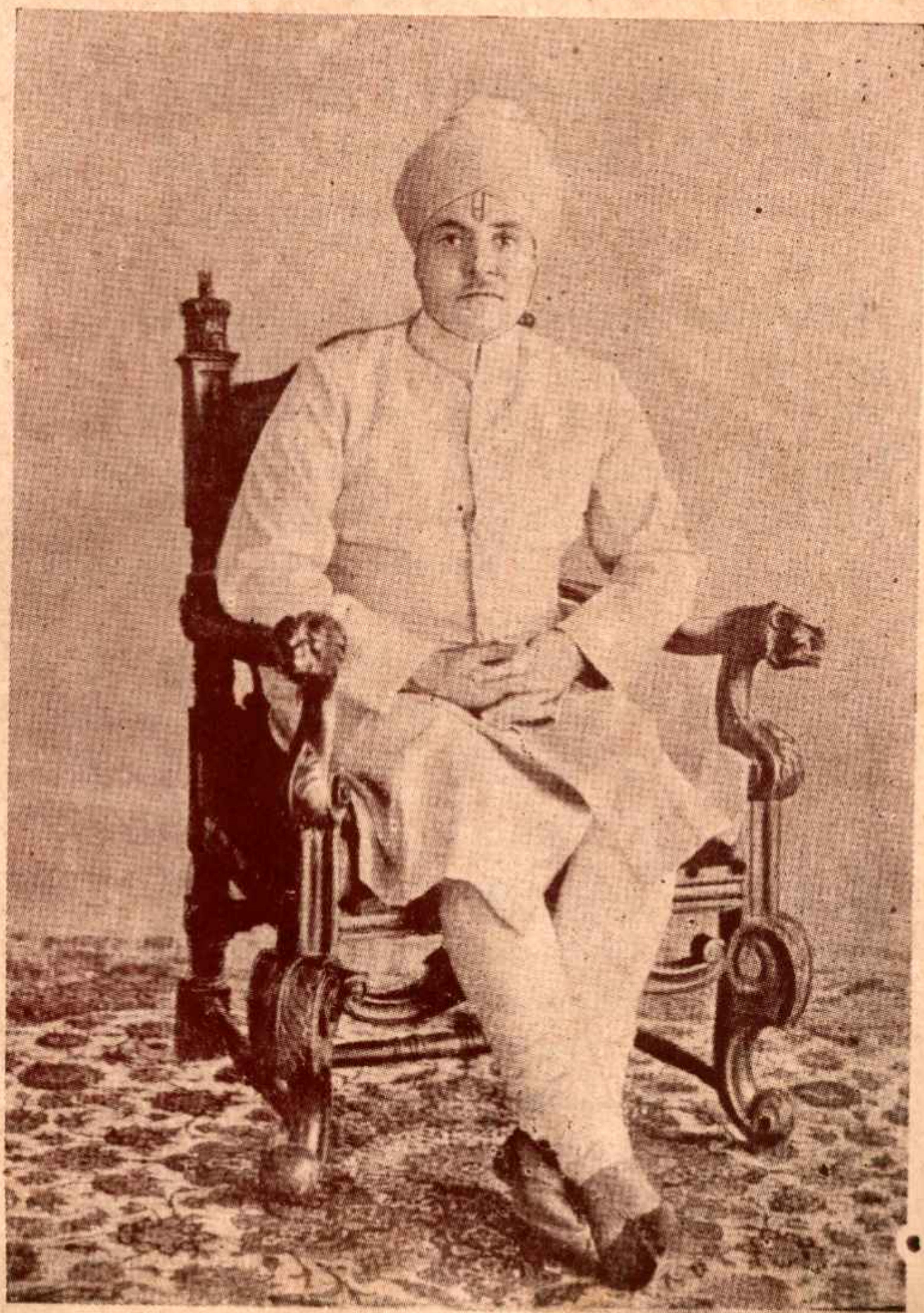
श्रीमती कुमारी/कुमार श्रीमान् ....

.... को

....



Colonel His Highness Maharaja Brijendra Sawai Shri Brijendra Singh Bahadur Bahadur Jung of BHARATPUR (Rajasthan)



श्रीः

राजस्थान लोक सेवा आयोग के अध्यक्ष श्रीमान् विष्णु वासुदेव नारलीकर की धर्मपत्नी श्रीमती सुमति नारलीकर की सम्मतिः—

महामहिमाचार्याणां श्रीमदमृतवाग्भवस्वामिनां श्रीसप्तपदी-हृदयं सहृदयानां हृदयपट्टले किमप्यवर्णनीयं उदात्तं चित्रं चित्रयति वैवाहिकजीवनस्य। वैदिके विवाहविधौ सप्तपदी नाम अतीव रमणीयश्च गंभीरश्चाचारः। अस्य यथार्थस्वरूपं अनुपमत्वं अर्थगौरवं कल्पनालालित्यं च उत्कटं प्रदर्शितं सप्तपदीहृदये श्रुतपारदर्शिभिः अमृतवाग्भवाचार्यैः।

बहिर्मुखानां ऐहिकसुखैकदेवानां पाश्चात्यानां जीवनं सर्वमपि शिरोधार्यमनुसरणीयं चेति निश्चितमतीनां नवानां भारतीयानां अज्ञानध्वान्तविध्वंसाय सूर्यसमप्रभं इदं सप्तपदी-हृदयं भविष्यति।

निषेकादिश्मशानान्ताः सर्वेऽपि संस्काराः आद्यैः ऋषिभिः प्रणीताः यथावदनुष्ठिताः कल्याणात् कल्याणतरं नयन्ति मानवम्। किन्तु महतः कलिकालप्रभावात् क्लेशमोहाक्रान्तस्य साधारण-मानवस्य बुद्धिस्तेषां महत्वं, मर्म, हृदयं वा सम्यग् ज्ञातुं न प्रभवति। अत एव दृश्यते ग्लानिर्धर्मानुसरणे धर्मविधीनां आचरणे च। यदि सप्तपदीहृदयसदृशं सर्वसंस्कारहृदयं निर्मातुं मतिं कुर्वीरन् पूज्यपादाः तर्हि अतीव शोभनं भवेत्।

समुपस्थितविवाहमंगलाभ्यां वधूवराभ्यां मंगलाकांक्षिभिः प्रियजनैः गुरुजनैश्च सप्तपदीहृदयं आद्योपहारत्वेन अवश्यं प्रदेयम् । सप्तपदीहृदयस्य श्रवणमनननिदिध्यासनादनन्तरं वधूवरयोः गृहस्थाश्रमस्य शुभारंभः क्षेम्णे जीवनसाफल्याय च अवश्यं भविष्यति ।

अतः काले काले प्रियजनानां विवाहविधौ महार्हवस्त्राभरणवत् महार्हरत्नालंकारवत् मंगलोपहाररूपेण प्रदानाय अस्य सप्तपदीहृदयस्य महान् संचयः गृहे कार्यः गृहवद्भिः ।

सप्तपदीहृदयस्य सर्जनेन महती खलु सेवा कृता भारतस्य पूज्यपादैः श्रीमदमृतवाग्भवाचार्यैः । ईदृग्विधा लोकसेवाश्चिरकालं कुर्वन्तु तीर्थभूता इति भगवन्तं प्रार्थयामि ।

सुमति नारलीकर

श्रीः

राजस्थान लोकसेवा आयोग के अध्यक्ष श्रीमान् विष्णु वासुदेव नारलीकर की धर्मपत्नी श्रीमती सुमति नारलीकर की संस्कृत सम्मति का हिन्दी में रूपान्तरः—

महामहिम आचार्य श्रीमान् अमृतवाग्भव स्वामी का श्रीसप्तपदीहृदय सहृदय व्यक्तियों के हृदयपटल पर विवाह के जीवन की एक अवर्णनीय, उदात्त छाप डालता है। वैदिक विवाहविधि में सप्तपदी एक ऐसा रमणीय आचार है जो गंभीर भी है। शास्त्रों के मर्म को समझने वाले अमृत-वाग्भवाचार्य ने सप्तपदीहृदय में इसका ठीक ठीक स्वरूप, अनौखापन, अर्थगौरव और उच्च कोटि का कल्पनालालित्य दिखाया है।

इस संसार के सुखों को सब कुछ समझने वाले, बहिर्मुख पाश्चात्यजनों की सारी की सारी जीवन शैली शिरोधार्य एवं अनुसरण करने योग्य है ऐसे जिन नई सभ्यता में पले लोगों के विचार बन चुके हैं उनके अज्ञानान्धकार का विनाश करने के लिये यह सप्तपदीहृदय सूर्य के समान प्रकाशवान् होकर रहेगा।

प्राचीन ऋषियों ने गर्भाधान से लेकर श्मशान पर्यन्त जितने भी संस्कार बतलाये हैं उनका ठीक ठीक अनुष्ठान करने से मनुष्य के कल्याण में उत्तरोत्तर वृद्धि होती है। किन्तु कलियुग के विकट प्रभाव से क्लेश और मोह में पड़े हुए साधारण मानव की बुद्धि उन (संस्कारों) के महत्व

को, मर्म को या सार को समझ नहीं पाती। इसीलिये धर्म के अनुसार जीने में तथा धर्मविधियों का आचरण करने में मनुष्य का मन नहीं लगता। यदि पूज्यपाद (आचार्य अमृतवाग्भव) सप्तपदीहृदय के समान सर्वसंस्कारहृदय जैसी किसी कृति के निर्माण की बात सोचें तो यह बहुत अच्छा हो।

वधू वर के शुभ विवाह के समय मंगलकामना करने वाले इष्टमित्रों और गुरुजनों को चाहिये कि वे सप्तपदीहृदय (पुस्तक) को पहले उपहार के रूप में अवश्य दिया करें। सप्तपदीहृदय के श्रवण, मनन और निदिध्यासन के बाद वधूवर के गृहस्थ आश्रम का शुभ आरंभ होगा, कल्याण होगा और जीवन में सफलता मिलकर रहेगी।

इसलिये गृहस्थजनों को चाहिए कि वे अपने प्रियजनों के विवाह के समय बहुमूल्य कपड़ों के साथ साथ, बहुमूल्य रत्नों के गहनों के साथ साथ मंगल उपहार के रूप में देने के लिये इस सप्तपदीहृदय (पुस्तक) को अपने घर में संग्रह करके रखें।

सप्तपदीहृदय की सृष्टि करके पूज्यपाद श्रीमान् अमृतवाग्भव आचार्य ने भारत की सचमुच बहुत बड़ी सेवा की है। तीर्थभूत (आचार्य) ऐसी लोकसेवाएँ बहुत दिन तक करतें रहें यह मैं भगवान् से प्रार्थना करती हूँ।

सुमति नारलीकर

अनुवादक

सम्पूर्ण दत्त मिश्र

श्री:

प्रकाशकका निवेदन

प्रिय पाठक जन !

"श्रीसप्तपदीहृदय" विश्वसाहित्यमें एक अद्वितीय पुस्तक है। सप्तपदीके विषयमें इस पुस्तकसे पहले कोई भी इस विषयकी सुन्दर पुस्तक नहीं थी। इसका पहला संस्करण केवल हिन्दी अनुवादके साथ सं० १९९६ वि० में प्रकाशित हुआ था। अब यह दूसरा संस्करण बहुत विद्वानोंके आग्रहसे संस्कृत, हिन्दी और इङ्गलिश रूपान्तरोंके साथ तथा हिन्दी और इङ्गलिशकी विस्तृत भूमिकाके साथ प्रकाशित किया जारहा है।

हिन्दी और इङ्गलिशकी भूमिकाके लेखक तथा हिन्दी और इङ्गलिशमें रूपान्तर करने वाले श्रीसम्पूर्णदत्त मिश्र हैं। इस परिश्रमके लिये मैं उनको विशेष धन्यवाद देना अपना परम कर्तव्य समझता हूँ। संस्कृत पञ्जिकाकार पं० श्रीबलजिन्नाथजीको भी मैं धन्यबाद देता हूँ। इस पर विद्वत्तापूर्ण सम्मति भेजने बाली भारतीय बिदुषी श्रीमती सुमति नारलीकर एम० ए० को भी मैं विशेष धन्यवाद दूँगा। उनकी सम्मति बड़ी मार्मिक और भारतीय संस्कृति

की पोषक है । आप विश्वविख्यात भारतीय विद्वान् श्रीविष्णु वासुदेव नारलीकरकी धर्मपत्नी हैं ।

"श्रीसप्तपदीहृदय" विवाहके इच्छुक मानवमात्रके लिये परम आवश्यक है । यह किसी जाति विशेषके लिये नहीं । जो भी सुखमय वैवाहिक जीवन बिताना चाहते हैं उनके ऐहिक और आमुष्मिक दोनों लोकोंके अभ्युदयकी भरपूर सामग्री इसमें प्राप्त हो सकती है ।

इस पुस्तकके प्रणेताकी व्यावहारिक तथा पारमार्थिक दोनों जीवनोंके अभ्युदयके लिये लिखी गई कई पुस्तकें हैं । पाठक लोग उनका अध्ययन कर लाभ उठा कर उनको स्वयं ही धन्यवाद देंगे ।

इस द्वितीय संस्करणका मुद्रणभार वहन कर भरतपुरके महाराजा श्रीव्रजेन्द्रसिंहजीने जनताका महान् उपकार किया है । इसके लिये सभी पाठक उनको स्वयं ही धन्यवाद देंगे । मैं भी उनको अनेकाऽनेक धन्यवाद देना अपना कर्तव्य समझता हूँ ।

अन्तमें मैं सभी पाठकोंसे साग्रह निवेदन करता हूँ कि वे इस पुस्तकको अवश्य पढ़ें और अपने दोनों लोकोंका कल्याण करें ।

विनीत :—

गोविन्द मिश्र

राजमिश्र

चौबुर्जा,
भरतपुर ।

SAPTA PADI

Introduction: A Defence of Marriage

Sapta Padi is the best and last rite of Hindu wedding ceremony. It is the symbolic representation or the bond of true love and friendship between the spouses. Spouses cover seven steps together reciting seven formulas from the 'Griya Sutras', signifying seven ideals of worthy married life. Brahman friars or Mishras in India assist the couple in understanding the meaning of these seven formulas.

Shri Amrita Vagbhavacharya has shed a new light on the traditional formulas in his 'Sapta padi Hridayam'. I would not touch upon the original Sanskrit verse constructed to bring out the meaning of the formulas because that is to be found in the book and the book is already in your hands. I will make an attempt to show why the great Acharya took up this subject and what univerasal good can be done by accepting the noble concept of marriage he has propounded in thfs book He also claims novelty

in his concept. According to him, this concept is useful not only to the traditional thinkers and believers of Indian cuture but also to other nations and races.

A great deal of humour is found to flout this man-made bondage marriage Marriage may be termed a 'legal prostitution' or described something else lightheartedly or fancifully. Much of the anarchy of thought and action about marriage. is explicable in the light of the fact that woman is the living object of passion and pleasure. It is the human lust which encourages men to speak of marriage in thousand ways according to their own vested interests or different spiritual standards.

The great spiritual thinkers of this country had also their experience and opinion about marriage. It must have been after a great deal of thinking, research and experiment that they came to the conclusion that if we have to have a stable societ, pure and perfect, we must make a definite bond with a girl. This bond must have some aims and those aims must be sublime A wife must not only be, though she must also be, the source of sexual pleasure. If a man does not

do without a woman, why should he not make her his eternal companion ? Gentlemen, I am conscious of your sense of wonder roused by the word eternal but I can not help inserting it and asserting that Acharya Amrita Vagbhava proposes the journey of the spouses just upto seven lokas symbolised by seven steps taken together. I, at this stage, am not in a position to challenge his mystic belief that worthy spouses while enjoying their sensuous life freely, must make it a point to win these Lokas. Had I been dealing with Physics, I would be the last man, with the present store of knowledge in Physics, to accept this belief. But I am dealing with Philosophy. Physics may not permit us to accept what does not appeal to our commonsense but he who does not deny totally or does not dismiss summarily what does not appeal to our common-sense, proves the best exponent of Philosophy according to the shastras. So I advise my readers not to suspect Acharya Amrita Vagbhava on the mystic portion of his interpretation, in Sanskrit verse, of the seven formulas of the 'Grihya Sutras'.

If only the worldly aspect is kept in view, Acharya Amrita Vagbhava's interpretation of

marriage is quite graceful and helpful in promoting the universal good, wealth and welfare of mankind.

Both women and men have an instinct of uniting together. They have also an equally strong instinct of keeping their relations constant. That is why a lover does not like others to interfere with his beloved. He feels a sort of possession for her and vice versa. Those who have a consideration for such possessions of others, are supposed to bear a good moral character. It is the stage where morality begins The breach of this morality is called sin.

Critically speakins, seduction may not be a sin in itself and it may not lead one to the hell delineated by the mystics of India but my friend, it can very well lead one to jail, unbecoming fall of prestige, Morel-Dawes-type mutual assaults and Nanavati-Sylvia-Ahuja-type cases of entanglement. In this way, 'morals are prudential'. I urge to the rebels of religion that if they are not prepared to accept morals in the name of religion, they ought to do so, at least, in the name of prudence. If my sincere advice can not redeem some adventurous souls from

Devil, they may go on seducing one girl after another and be prepared to receive chappals on their cheeks and bullets on their breasts. Had there been no pitiable fops in the world, instinct with an innate or acquired villainy, misled by ignorance, vanity, ambition or otherwise—wretched fops to whom I extend my most sincere sympathy and pray to God for their early redemption—there would be no catastrophe. Marriage is the triumphant canal constructed for the indispensable flow of the instinct of love. It is the regulated and refined way of loving by gentlemen Cupid can be best worshiped in the temple of marriage It is that grove under which spouses can go on satisfying their impulses properly without deforming the normal phase of either macrocosm or microcosm

Let us, then, cherish the pious spirit of Sapta Padi on the lines of eternal friendship for the victory of seven Lokas as suggested by Acharya Amrita Vagbhava, no matter if Spenser says:

'*True loves are often sown but seldom grow on ground*'.

Even the limited sense of Sapta Padi, if observed properly, can stop and eradicate evil, can also solve the problems of sex,

to a great extent. Although the symbolic texture and the show of Sapta Padi may seem childish and the performance of the Hindu ritual may look vain, it is essential for preserving culture with its tenor of purpose genuine

My dear readers, ladies and gentlemen, if you happen to be the intellect, you can keep both the traditional form and the purpose divine just as the people of England have decided to cherish both their Queen (the traditional throne) and the Parliament.

The greatest benefit of observing morals is that it fosters fortitude and strengthens the soul. If you have a bias against Hindu religion, I would not ask you to do otherwise but by observing the morality of Sapta Padi you yourself will grow religious if it is true that religion is 'morality tinged with emotion'. Mind that it is your lust, not intellect, which checks you from cherishing the spirit of Sapta Padi, the most healthy way of a happy married life.

If you have been, ever in your life, a foolish prey to certain metaphysical conceits, superstitions or if you have an aversion to mysticism,

I invite you to reckon a frankly temporal advantage of Sapta Padi corresponding to the conditions, place and times of your existence. Can not you conceive that Satan may also tempt you in the semblance of a charming woman whom you are not permitted by morals to love ? You frown at morals, kick that man-made hindrance away simply because you can not refrain from loving sinfully. Is not bread man-made ? Gentlemen, sin is very sweet. If you break the man-made morality for the sake of some transient pleasure, are you sure that you would never repent for your past designs and doings ? Siren chants are hard to forbear but you must not forget that the world is not fresh begun. Learn from the misfortunes of sailors and the laments of those who responded to false calls. With all my conscious preaching against levity and a careful account of the possible measures to check it, I am only reduced to compose the following lines:—

Inspite of great events to teach,
Their ill fates men and women reach.

With these hopes and fears, I introduce you to the realm of Sapta Padi newly inter-

preted by Shri Amrita Vagbhavacharya. I wish that spouses may learn something from this treatise and make their character precious and invincible. In a word, Sapta Padi can be the beginning of a very promising married life.

ULLASASHRIBHAVAN
MOHALLA
GOPAL GARH,
BHARATPUR.
(RAJASTHAN)

Kavipundarikam
Sampoorna Datta Mishra
M. A. (Sans.), M. A. (Eng.)



सप्तपदी

(भूमिका : विवाह का महत्व)

सप्तपदी हिन्दुविवाहसंस्कारकी उत्तम तथा अन्तिम रीति है। यह वरवधूके बीच सच्चे प्रेम एवं सौहार्दका प्रतीकात्मक प्रतिनिधित्व करती है। गृह्यसूत्रोंमें श्रेष्ठ वैवाहिक जीवनके दिग्दर्शक सात सूत्रोंका उच्चारण करते हुए वरवधू सात डग साथ साथ भरते हैं। भारतवर्ष में ब्राह्मण पुरोहित अथवा मिश्रलोग दम्पतीको इन सात सूत्रोंका अर्थ समझाते हैं।

श्रीमान् अमृतवाग्भवाचार्यने इन सनातन सूत्रोंपर एक नया प्रकाश डाला है। इन सूत्रोंका अर्थ समझानेके लिये उन्होंने जिन मौलिक संस्कृत पद्योंकी रचनाकी है मैं उनकी चर्चा यहाँ नहीं करूँगा क्योंकि वे पुस्तकमें हैं और पुस्तक आपके हाथोंमें है। मैं यह बतानेका प्रयास अवश्य करूँगा कि पूज्य आचार्यने क्यों इस विषयको हाथमें लिया और उन्होंने इस पुस्तकमें विवाहके सम्बन्धमें जिस श्रेष्ठ धारणा का प्रतिपादन किया है उसको स्वीकार करनेसे संसारका क्या भला हो सकता है। वे अपनी इस धारणाको नूतन घोषित करते हैं। उनके मतसे यह धारणा भारतके सनातन

एवं श्रद्धालुओंके लिये ही उपयोगी नहीं अपितु दूसरे राष्ट्रों और जातियोंके लिये भी लाभदायक है।

मानव निर्मित विवाह-बन्धनकी हँसी उड़ानेकी बात बहुत लोगोंके मनमें आती रही है। विवाहको 'नियमसम्मत व्यभिचार' बताया जा सकता है या उसे और कुछ बता कर मनोरंजन या चुहल की जा सकती है। विवाहके सम्बन्धमें विचार और व्यवहारमें यह सचाई है कि नारी कामना और आनन्दकी जीती जागती मूर्ति है। यह मानव-सुलभ वासना ही है जो लोगों को निहित स्वार्थोंके वशीभूत करके तथा उनकी भिन्न भिन्न आध्यात्मिक विकासकी कोटिके अनुसार उन्हें विवाहके विषयमें सहस्रों प्रकारकी बात बनानेका अवसर देती है।

इस देशके महान् आध्यात्मिक विचारक भी विवाहके सम्बन्धमें अपना अनुभव और मत रखते थे। वे बहुत कुछ चिन्तन, खोज और प्रयोगोंके बाद ही इस निष्कर्षपर पहुँचे होंगे कि यदि हमें शुद्ध, सर्वाङ्गपूर्ण एवं स्थिर समाज की रचना करनी है तो हमें किसी एक लड़कीसे निश्चित सम्बन्ध करना चाहिये। इस सम्बन्धके कुछ उद्देश्य होने चाहियें और वे उद्देश्य अवश्य ही ऊँचे होने चाहिएँ। भार्या इन्द्रियजन्य सुखका साधन अवश्य होनी चाहिये पर केवल इन्द्रियजन्य सुखका साधन नहीं होनी चाहिये। यदि पुरुष नारीके बिना नहीं रह सकता तो फिर वह उसे अपना नित्य सहचर क्यों न

बना ले ? सज्जनो, नित्य शब्दको सुनकर आपके मनमें जिस आश्चर्यकी भावनाका संचार हुआ है उससे मैं अवगत हूँ पर मैं इसका समावेश किये बिना नहीं रह सकता और यह स्वीकार किये बिना नहीं रह सकता कि आचार्य अमृतवाग्भव वरवधूकी उन सात लोकोंकी यात्राका प्रस्ताव करते हैं जिनका प्रतीक सात डग भरना है। स्वच्छन्द भावसे बहिर्मुख जीवनका आनन्द लेते हुए वरवधू इन लोकोंकी विजयको अपना लक्ष्य बना कर चलें इस रहस्यपूर्ण विचारधाराको मैं चुनौती नहीं दे सकता। यदि मैं भौतिकशास्त्रका विवेचन करता होता तो संसारमें भौतिकशास्त्रके ज्ञानका जितना संचय उपलब्ध है उसके अनुसार तो मैं इस विचारधाराको स्वीकार नहीं करता। पर मैं यहाँ दर्शन शास्त्रकी बात कर रहा हूँ। जो बात सामान्य बुद्धिगम्य नहीं उसको स्वीकार करनेकी अनुमति भौतिकशास्त्र नहीं देता पर वही व्यक्ति ज्ञानमार्गका उद्भट विद्वान् सिद्ध होता है जो सामान्यमेधातीत विषयोंका यों ही तिरस्कार नहीं कर बैठता अथवा उनको पूर्णरूपसे अस्वीकार नहीं कर देता। ऐसा शास्त्रोंका मत है। इसलिये मैं अपने पाठकों से कहूँगा कि वे गृह्यसूत्रोंके सात सूत्रोंके व्याख्यापरक आचार्य अमृतवाग्भवके संस्कृत पद्योंके रहस्यात्मक अंशपर अविश्वास न करें।

यदि संसारके दृष्टिकोणको ही ध्यानमें रखा जाय तो भी विवाहकी आचार्य अमृतवाग्भव-कृत व्याख्या बड़ी सुन्दर

है और मानव जातिके कल्याण, समृद्धि एवं सांसारिक हितके लिये सहायक है।

स्त्री और पुरुष दोनोंमें परस्पर मिलनकी एक स्वाभाविक चाह होती है। उनमें अपने सम्बन्धोंको स्थिर रखने की भी एक उतनी ही बड़ी चाह होती है। यही कारण है कि कोई प्रेमी अपनी प्रेमिकाके बीचमें कोई व्यवधान देखना नहीं चाहता। वह उसके ऊपर अपना एक अधिकार समझने लगता है और ऐसा ही प्रेमिका भी करती है। जो लोग इस प्रकारके अधिकारोंका सम्मान करते हैं वे सच्चरित्र समझे जाते हैं। यहीं से सदृत्तका आरंभ होता है। इस सदृत्तका भंग पाप कहलाता है।

आलोचनाकी दृष्टिसे, व्यभिचार चाहे स्वयंमें कोई पाप न भी हो और चाहे यह उस नरकमें न भी ले जाता हो जिसका वर्णन भारतके रहस्यवेत्ताओंने किया है परन्तु मित्र, यह कारागारमें तो पहुँचा ही सकता है, प्रतिष्ठाका अशोभनीय पतन तो करा ही सकता है, मौरिल-डावीजके ढंगके पारस्परिक घात-प्रतिघात तथा नानावटी-सिल्विया-आहूजाके ढंगकी उलझन तो उपस्थित कर ही सकता है। इस ढंगसे सदृत्त बुद्धिमत्ता है। मैं ब्राह्मण धर्मके विद्रोहियोंसे अनुरोध करता हूँ कि यदि वे धर्मके नाम पर सदृत्तको स्वीकार नहीं कर सकते तो वे, कम से कम, बुद्धिमत्ताके नामपर तो इसे स्वीकार कर ही लें। यदि मेरा निष्कपट उपदेश कुछ मन

चले लोगोंको पापसे नहीं हटा सकता तो वे एकके बाद दूसरी लड़कीको फुसलाते जायँ और आरामसे मुँहपर चप्पल और सीनेपर गोली खाते जायँ। यदि संसारमें दयनीय छैला नहीं होते, स्वभावजन्य या संगतिजन्य दुष्टतासे भरे हुए, अज्ञान, मूढ़ता, महत्वाकांक्षा या और किसी कारण बहके हुए ऐसे अभागे छबीले नहीं होते जिनके प्रति मैं सचमुच सहानुभूति व्यक्त करता हूँ और जिनके शीघ्र सद्बुद्धिलाभके लिये परमात्मासे प्रार्थना करता हूँ, (ऐसे छैला नहीं होते) तो कोई संकट उपस्थित नहीं होता। विवाह प्रेमकी चाहके अनिवार्य प्रवाहके लिये बनाई गई विजयोल्लासिनी नदी है। यह सज्जनोंके प्रेम करनेकी नियन्त्रित एवं परिष्कृत विधि है। कामदेवकी सबसे अच्छी पूजा विवाहका मन्दिर बना कर हो सकती है। यह वह निकुंज है जहाँ वरवधू वृहत्संसार और सूक्ष्मसंसारके स्वाभाविक स्वरूपको क्षति पहुँचाये बिना अपनी वृत्तियोंका सुचारुरूपसे तोषण करते हुए रह सकते हैं। यदि स्पेंसर कहता है कि:—

'सच्चे प्रेम के बीज तो बहुत बोते हैं पर धरती पर यह पनपता कम है।'

तो भी कोई चिन्ता नहीं।

आचार्य अमृतवाग्भवके द्वारा सुझाई गई सात लोकोंकी विजयके लिये हमें सच्चे प्रेमकी परिपाटीके अनुसार सप्तपदी की धार्मिक भावनाका पोषण करना चाहिये। यदि सप्तपदी

की भावनाका संकुचित अर्थोंमें भी प्रयोग किया जाय तो भीं यह अनेक बुराइयोंको दूर कर सकती है तथा कामजन्य समस्योंका बहुत अंशोंमें समाधान कर सकती है। यद्यपि सप्तपदीकी प्रतीकात्मक वितति एवं प्रदर्शन एक खेल दिखाई देता हो और हिन्दु विवाहपद्धतिका कर्मकाण्ड व्यर्थ लगता हो फिर भी उत्कृष्ट उद्देश्यकी व्यापकता वाली संस्कृतिके संरक्षणके लिये यह आवश्यक है।

मेरे प्रिय पाठको, सन्नारियो और सत्पुरुषो, यदि आप प्रज्ञाशील हो तो पुरातन कर्मकाण्ड और उसके दिव्य उद्देश्य की रक्षा उसी भाँति कर सकते हो जैसे कि इङ्गलैंडकी जनता ने अपनी रानी अर्थात् राजसिंहासन और लोकसभा इन दोनोंको बनाये रखनेका निर्णय कर लिया है।

सद्वृत्तका सबसे बड़ा लाभ यह है कि यह संकटोंका सामना करनेका साहस देता है और आत्माको बलवान् बनाता है। यदि आप हिन्दु धर्मके विरोधी हैं तो मैं आपसे विरोध त्यागनेके लिये नहीं कहूँगा पर यदि यह सच है कि 'भावनासे रंगे सद्वृत्त'का नाम ही धर्म है तो सप्तपदीके सद्वृत्तका आचरण करके आप स्वयं धर्मात्मा बन जायँगे। ध्यान रखिये कि यह आपकी वासना है, प्रज्ञा नहीं, जो आपको सप्तपदीकी भावनाका पालन करनेसे रोकती है–ऐसी सप्तपदी जो एक आनन्दमय वैवाहिक जीवनका सबसे अच्छा मार्ग है।

यदि आप कभी जीवनमें मनोजगत्की वञ्चनाओं तथा अन्धविश्वासोंके वशमें पड़कर मूर्ख बन चुके हैं अथवा आप रहस्यपूर्ण सिद्धान्तोंको अपथ्य समझते हैं तो मैं आपको अपने जीवनकी परिस्थिति, देश और कालके अनुसार सप्तपदीके ऐहिक लाभका मूल्यांकन करनेको आमंत्रित करूँगा। क्या आप यह नहीं सोच सकते कि पाप भी आपको एक ऐसी सुन्दरीके रूपमें लुभाने आ सकता है जिससे प्रेम करनेकी अनुमति आपको सदृत्त नहीं देता ? आप सद्वृत्तपर भ्रुकुटि तानते हैं, उस मानवनिर्मित बाधाको लात लगा देते हैं, केवल इसलिये कि आप पापपूर्ण प्रेम किये बिना रह नहीं सकते ! क्या रोटी मानव-निर्मित नहीं है ? सज्जनो, पाप बहुत मीठा होता है। यदि आप किसी क्षणिक सुखके निमित्त मानव निर्मित सद्वृत्तका उल्लंघन करते हैं तो क्या आपको यह विश्वास है कि आप अपनी अतीत कामना और करतूतों के लिये कभी नहीं पछतायेंगे ? सागरकी सुन्दर परियोंका मधुर संगीत त्यागना बड़ा कठिन है पर आपको नहीं भूलना चाहिये कि यह कोई संसारका आरम्भ काल नहीं है। नाविकोंके विनाशसे कुछ सीखिये और उन लोगोंके विलापसे कुछ सीखिये जो भूंठी आवाजों पर चल पड़े। दुराचारके विरुद्ध यह सारा उपदेश करके तथा इसको रोकनेके सम्भव उपायोंका उल्लेख करके भी मैं केवल यही दोहा बना पाया हूँ कि:—

यद्यपि शिक्षापरक है, घटनाचक्र विशाल।
नर नारी दुर्भाग्य से, जा मिलते तत्काल॥

इन सब आशा और आशंकाओंके साथ मैं आपको आचार्य अमृतवाग्भवके द्वारा नवीनरूपसे व्याख्यात सप्तपदी के साम्राज्यमें आमंत्रित करता हूँ। मैं कामना करता हूँ कि वरवधू इस समीक्षासे कुछ सीखेंगे और अपने चरित्रको बहुमूल्य एवं अपराजेय बनायेंगे। सारांश यह है कि सप्तपदी एक बहुत ही महत्वपूर्ण वैवाहिक जीवन का आरम्भ बन सकती है।

कविपुण्डरीकम्
उल्लासश्रीभवन, **सम्पूर्ण दत्त मिश्र**
मुहल्ला गोपालगढ़, *एम. ए. (संस्कृत), एम. ए. इंगलिश*
भरतपुर (राजस्थान) अनुवादक
सम्पूर्ण दत्त मिश्र

श्रीः

प्रस्तावना

इह खलु शिवशक्तिमये विश्वस्मिन्नपि विश्वमण्डले केनाऽपि नु केनाऽपि संसर्गविशेषेण परस्पराऽऽनन्दाय दीव्यद्भिश्वं संसृष्टमेव विद्योतते । तत्र स्वस्वसमाजसंस्थापिततत्तन्नियमाऽनुसारेण स्त्रीपुंसौ परस्परं पतिपत्नीभावेन वृणुतो यत्र संस्कारे कर्मणि तत्संस्कारकं कर्म विवाह इति समामनन्ति सदाम्नायरहस्यविदः ।

सोऽयं विवाहो बहुविधः । विशेषेण = नियमविशेषेण पतिपत्नीभावेन परस्परं वहनं = प्रापणं स्त्रीपुंसयोर्यत्रेति योगरूढोऽयं विवाहशब्दः । मन्वादिमहर्षिभिरयं विवाहोऽष्टधा प्रदर्शितः । तत्तत्रैव द्रष्टव्यम् ।

यज्ञेन यज्ञं यजमाना आर्याः सुव्यवस्थास्थापनेन समस्तस्याऽपि जगत आनन्दप्रदानाय संस्कुर्वाणा एव दरीदृश्यन्ते । अत एवोक्तं भगवता--

सहयज्ञाः प्रजाः सृष्ट्वा पुरोवाच प्रजापतिः ।
अनेन प्रसविष्यध्वमेष वोऽस्त्विष्टकामधुक् ॥ इति

आर्यत्वप्रापकेन विधिना परस्परसम्भावनं कर्म सर्वमपि यज्ञपदव्यवहारमवगाहते । तत्राऽन्तर्मुखतायै यदेव हितं तच्छ्रेष्ठं बहिर्मुखतायै च कनिष्ठम् । श्रेष्ठकर्मणा श्रेष्ठफलप्राप्तिः, कनिष्ठेन च कनिष्ठफलप्राप्तिः । अत एव धर्मपुत्ररतिफलाय विवाहे पूर्वपूर्वस्य श्रैष्ठ्यं बोधितं सनातनैर्महर्षिभिः । भवतु ।

भारतवर्षे खलु सनातनैः पारोवर्यविद्भिः साक्षात्कृतसमस्तजगत्कल्याणसाधनैर्महर्षिभिः संस्थापिते विवाहविधाने कर्मकलापे सर्वोत्तममन्तिमं च कर्म सप्तपदी नाम। अस्य कर्मणः समाप्तावेवाऽच्छेद्यो विवाहो भवति। अतः सर्वश्रेष्ठं कर्मेदं संमन्वते विद्वांसः। अत्र हि कर्मणि वरः सप्त पदानि वधूं स्वात्मना सह सञ्चालयति। सप्तपदसञ्चालनमिदं सप्तश्रेष्ठलोकजयसूचकम्। सप्तैव खलु श्रेष्ठा लोकाः। तत्पर्यन्तमेकमत्येन सह गच्छतोः पूर्णमित्रभावोऽपि स्वरसिद्ध एव। अत एव "साप्तपदीनं सख्यम्" इति महर्षयो निराहुः। सप्तलोकविजयाभिलाषी पुरुषः खलु स्वसाहाय्याय स्वात्मनो बहिर्मुखानन्दपारिपूर्ण्याय च स्त्रियं सप्तधा प्रतिश्रुत्य तत्सप्तलोकविजयाय स्वात्मानं पूर्णप्रतिभूत्वेन प्रतिज्ञाप्य च तया सह पूर्णमित्रभावं स्थापयतीत्यहो धन्येयं भारतीयाऽऽर्यविवाहसंस्कारपरिपाटीषूत्तमाऽन्तिमा च सप्तपदी। तत्र सप्तपद्यामस्यां वरेण क्रियमाणाः सप्त प्रतिज्ञा 'एकमिषे" इत्यादयोऽति संक्षिप्ता उक्ता गृह्यसूत्रेषु। तद्हृदयमेव मनोहरपद्यगर्भीकारेण विशदीकृत्य स्फुटीकृतं "**श्रीसप्तपदीहृदयम्**" इति सुगृहीतनामधेयेऽस्मिन् ग्रन्थे।

सुहृज्जनानामाग्रहवशंवदोऽयं जन एतद्ग्रन्थप्रणयने लोकोपकारमपि जानानः प्रणीयेदं ग्रन्थरत्नं विश्वस्मै जनाय हितं प्रार्थयते--

श्रीमतामात्मरूपः--

अमृतवाग्भव आचार्यः

प्रस्तावना

हिन्दी रूपान्तर

शिव शक्तिमय इस सम्पूर्ण विश्वमें सब लोग किसी न किसी प्रकारके सम्पर्कसे बँधे हुए एक दूसरेके आनन्दके लिये काम कर रहे हैं। अपने अपने समाजमें बनाये हुए नियमोंके अनुसार जब स्त्री पुरुष एक दूसरेको पति पत्नी के रूपमें स्वीकार कर लेते हैं तो इस संस्कारको श्रेष्ठ शास्त्रोंके रहस्यको जानने वाले लोग विवाहके नामसे पुकारते हैं।

यह विवाह अनेक प्रकारका होता है। विवाहमें स्त्री पुरुष विशेष नियमसे पति पत्नी भावको प्राप्त होते हैं। विवाह शब्द योगरूढ़ है। मनु आदि महर्षियोंने विवाहके आठ भेद बतलाये हैं। यह वहीं (उनके ग्रन्थोंमें) देखनेकी बात है।

यज्ञ (सत्कर्म) से यज्ञ (परमात्मा) की पूजा करते हुए आर्य लोग श्रेष्ठ व्यवस्थाकी स्थापना करके सारे संसारको आनन्दमय बनानेके लिये संस्कृत करते आ रहे हैं। इसीलिये भगवान् (श्रीकृष्ण) ने कहा है:—

प्रजाके साथ साथ सबकी सहायताके लिये यज्ञकी

भी सृष्टि करके प्रजापतिने कहा कि इसीकी सहायतासे जियो, यही तुम्हारी कामनाओंको पूर्ण करने वाला होगा।

आर्यत्व उत्पन्न करने वाले ढंगसे एक दूसरेको तुष्ट करनेका जो काम है वह सब यज्ञ कहलाता है। उसमें भी जो काम अन्तर्मुखतामें सहायक होता है वह बड़ा है और बहिर्मुखताका सहायक छोटा है। बड़े कामसे बड़ा फल प्राप्त होता है और छोटे कामसे छोटा। इसीलिये सनातन महर्षियोंने रतिके लिये किये गये, पुत्रके लिये किये गये तथा धर्मके लिये किये गये विवाहोंमें क्रमसे एक से दूसरे को अधिक अच्छा माना है। यह बात यहीं छोड़ दीजिये।

सारे संसारके कल्याणके साधनोंको तथा पुरानीसे पुरानी एवं नईसे नई परम्पराओंको समझने वाले, भारत वर्षके सनातन महर्षियोंके द्वारा चलाई गई विवाहपद्धति में सप्तपदी उत्तम और अन्तिम कार्य है।

इस कामके पूरा होनेपर ही विवाह पूरा होता है। इसीलिये विद्वान् लोग इस कामको सबसे ऊँचा मानते हैं। इस कृत्यमें वर वधूको अपने साथ सात पद चलाता है। यह सात पद चलाना सात श्रेष्ठ लोकोंकी विजयका सूचक है। सात ही श्रेष्ठ लोक हैं। उन (लोकों) तक परस्पर सम्मतिसे यात्रा करते हुए दम्पतीका पूर्ण मित्र भाव अपने आप उत्पन्न होता है। इसीलिये महर्षि लोग मित्रताको साप्तपदीन मानते हैं। सात लोकोंकी विजयका अभिलाषी

पुरुष अपनी सहायताके लिये और अपने बहिर्मुख आनन्द की पूर्तिके लिये स्त्रीको सात वचन देकर तथा उससे (स्त्री से) भी सात लोकोंकी विजय करानेका पूर्ण उत्तर-दायित्व अपने ऊपर लेकर उसके (स्त्री के) साथ पूर्ण मित्र भाव स्थापित करता है। इस प्रकार भारतीय आर्य विवाह संस्कार परिपाटीका उत्तम और अन्तिम कृत्य सप्तपदी सचमुच प्रशंसाके योग्य है। इस सप्तपदीमें वरके द्वारा की जाने बाली 'एकमिषे' इत्यादि सात प्रतिज्ञाओंका गृह्य-'सूत्रोंमें बहुत संक्षिप्त वर्णन मिलता है। 'श्री सप्तपदीहृदयम्' नामके इस धार्मिक ग्रन्थमें इसी (सप्तपदी) के महत्त्वको मनोहर पद्योंमें विस्तारसे समझाया गया है।

संसारके उपकारको समझकर मित्र सज्जनोंके आग्रह से इस ग्रन्थका निर्माण करके जो व्यक्ति (लेखक) सबकी भलाईकी प्रार्थना करता है वह है:—

आपका अपना :—
अमृतवाग्भव आचार्य

अनुवादक :
सम्पूर्ण दत्त मिश्र

प्र स्ता व ना

English Translation

The universe which is a manifestation of Shiva and Shakti, exists by dint of some association or other causing mutual happiness. The sacred ceremony in which men and women turn husbands and wives,following the rules of their respective established social set up, is termed marriage by the authorities of the scripture.

There are many kinds of marriage. Etymologically speaking, the word Vivaha in Sanskrit has come up to carry both the senses: literal and acquired. It means the uniting of a man with a woman, in the way of husband and wife, keeping up some bond for their mutual interest. The seers like Manu have described eight types of marriage for which their works may be consulted.

The Aryas, worshipping Yajna: God with Yajna: good deeds and making better arrangements for the welfare of the whole world, have

always been trying to instil every kind of refinement in nature. That is why Shri Krisna says :—

Prajapati, after having created Praja: beings and Yajna: good instincts for their assistance, asked them to live accordingly. He blessed them that it (Yajna) would satisfy their desires.

Every deed, indulging the interest of one another-the deed, which leads one to become an Arya, is termed Yajna. The deed which is helpful in introversion, is higher and that which encourages extroverion is lower. High deeds give rise to high results and low deeds to low results. That is why the renowned seers of India have made an important gradation of good, better and best in Rati: pleasure, Putra: reproduction and Dharma: duty, the three ends of marriage respectively. Let it be so.

Sapta Padi is the best and last rite of marriage ceremoney estabiished by the great Indian seers who had a clear vision of the means

of welfare of the whole world. Marriage is complete only after observing this rite. So scholars call it the best rite. The bridegroom makes his bride walk seven steps together. That is the rite. This covering seven steps together is indicative of the pledge of conquering seven sublime Lokas. High Lokas are seven only. The complete friendship of the couple, intending their journey, with mutual consent, up to those Lokas, comes of their own interest. So the great seers say that friendship is complete after seven steps covered together. The man, desirous of conquering seven Lokas appoints his wife for his assistance and fulfilment of extroversive pleasure, takes an oath to that effect seven times, promises to bear full responsibility of making her win the seven Lokas, establishing a complete friendship with her. Thus Sapta Padi, the best and last feature of Indian marriage ceremony of Aryas, is doubtless praisworthy. Very concise are, in the 'GrihyaSutras,' the seven oaths 'Ekamise' etc., to be taken by a bridegroom in this Sapta Padi. The very sense of that Sapta Padi is vividly explained and displayed with the help of arresting stanzas in this sacred treatise.

Under the influence of the persistence of good hearted friends and with a conviction of universal service in composing this book by me, the book is put forward for the benefit of all. A general good is solicited by—

Your own self
Amrita Vagbhavacharya
Translator
Sampoorna Datta Mishra



श्रीः

श्रीसप्तपदीहृदयम् ।

महामहिमश्रीमदमृतवाग्भवाचार्यप्रणीतम् ।

शिवशक्तिमयं विश्वं परस्परसुखाप्तये ॥
विवाहितं विजयते सप्तपद्या प्रतिश्रुतम् ॥ १ ॥

प्रथमतस्तावत् समुचितेष्टदेवताजयकारमयं मङ्गलमातनोत्याचार्यवर्यः—

शिवक्तिमयं विश्वं.....................प्रतिश्रुतम् ॥१॥

यत्किञ्चिदिदं विश्वं तत्सर्वमपि शिवशक्तिमयम् । शिवश्च स्वयं शक्तिमयः शक्तिश्चापि शिवमयी यथोक्तम्—

'न शिवः शक्तिरहितो न शक्तिः शिववर्जिता ।'

तयोः शिवशक्त्योर्विलासमात्रसतत्त्वमिदं विश्वं सुतरां शिवशक्तिमयम् । अत्र चानन्तवैचित्र्यचित्रिते । संसारे क्वचित् शिवत्वप्राधान्यं क्वचिच्च शक्तित्वप्राधान्यं प्रकाशते । जनैश्चापि ध्यानोपासनादिव्यवहारसिद्धये धर्मार्थकाममोक्षरूपफलचतुष्टयसिद्धये च क्वापि शिवत्वप्राधान्यं कल्प्यते क्वचिच्च

शक्तित्वप्राधान्यम् । तदित्थं विश्वं स्फुटं पुरुषरूपतया शिवमयं स्त्रीरूपतया च शक्तिमयम् । तदुभयरूपं परस्परस्य सुखस्य प्राप्तये सप्तपद्या– धर्मशास्त्रादिप्रसिद्धया अग्निसाक्षिकया सप्तपदगत्या· प्रतिश्रुतम्—प्रतिज्ञातं सत् विवाहितं भूत्वा विजयते—सर्वोत्कर्षेण वर्तते । यस्तु विवाहः सप्तपदी प्रतिज्ञारहितः, नासौ सर्वोत्कर्षेण वर्तितुं शक्नोति । इत्थंभूत्वा पैशाचराक्षसादयो विवाहा गर्हिता एव ॥१॥

शिव शक्तिमय इस सारे संसारके व्यक्तियोंका एक दूसरेके सुखके लिये सप्तपदीसे प्रतिज्ञाबद्ध होकर विवाह करना परम कल्याणकारक है ।

The world of men and women (Shiva and Shakti), united in the bond of marriage by Sapta Padi for promoting the pleasures of one another together rises with triumph.

प्रथमपदे वर आह—(१)

मदतिथिगुरुपुत्रभ्रातृवर्गं समस्तं
विविधविधिविधानैः साधितैरन्नपानैः ॥
इह हि परिचरन्ती माननीया स्वराष्ट्रे
भवसि जयसि लोकं मद्गृहस्था सुधाशे ! ॥२॥

यासौ सप्तपदी तत्र प्रथमे पदे वर इषेत्वेति वदन् यद्यत प्रतिजानीते तत्तद्द्वाभ्यां पद्याभ्यामाह—

मदतिथि .... सुधाशे ॥२॥

हे सुधाशे—सुधाम्—अमृतमश्नातीति सुधाशा । सैवं भूत्वा वधूरत्र संबुध्यते हे सुधाश इति । यो जनः देवान् पितॄन-तिथिप्रभृतींश्च भोजयित्वा स्वयमश्नाति स एव यज्ञशिष्टाशी भवन् सुधाश इति मन्तव्यः । भारतीया वधूश्चैवं सर्वदैव सुधाशा । विविधैः—बहु प्रकारैः विधिविधानैः—पाकशास्त्र-प्रसिद्धाभिः पाचनशैलिभिः साधितैः—सुसंस्कृतैः—सुपाचितै रन्नपानैः—भोज्यैः पेयैश्च, मदतिथिगुरुपुत्रभ्रातृवर्गम्—ममा-तिथिपितृगुरुप्रभृतीन् पूजनीयान्, पुत्रशिष्यप्रभृतीननुकम्पनीयान्, भ्रातृस्वसृसुहृत्प्रभृतींश्च समान् जनान् इति भावः । समस्तम् अखिलमपि मत्सम्बद्धं जनसमुदायम्, इह भूलोके गृहस्थधर्मे वा परिचरन्ती—भोज्यपेयादिना सर्वानपि तर्पयन्ती, स्वे राष्ट्रे माननीया—आदरार्हा भवसि । सर्वेऽपि गृहस्थाश्रमधर्ममाचरन्तीं त्वामादरसत्कारदृष्ट्या द्रक्ष्यन्तीति भावः । किञ्च मद्गृहस्था—मम गृहे गृहस्थधर्ममाचरन्ती स्थिता लोकम्—इमं भूलोकं जयसि । भूलोकेऽवाप्यं पूर्णमानन्दमवाप्स्यसि । सत्वरं चावाप्स्यसीति विवक्षया वर्तमानसमीपे भविष्ये वर्तमानवदेव लट् प्रयुक्तः ।

पहले पदपर वर कहता है:—

ओ अमृतका भोजन करने वाली, मेरे अतिथि, गुरु, पुत्र और सब सगे सम्बन्धियोंको अनेक प्रकारसे रच पच कर बनाये गये खाने पीनेके पदार्थोंसे प्रसन्न करती हुई तुम अपने राष्ट्रके आदरका पात्र बन जाओगी और मेरे घर में रहती हुई तुम इस लोक (भूलोक) को जीत लोगी ।

At the first step, the husband says:—

O, the eater of sacred food, if you go on entertaining my guests (saints, scholars, sages, relations or whosoever happens to come to my residence) parents, offspring and the circle of my friends, with various foodstuffs and drinks prepared carefully, you shall grow respectable for my nation, and. living with me as my wife, you shall conquer this world, the 'BHOOLOKA'.

इषे नयाम्यहं विष्णुस्त्वां सुन्दरि ! सुधाशने ॥
पदमेकमिति प्रोक्ते पत्या प्राह वधूरिदम् ॥३॥

अथ प्रथम एव पदे वरकृतः प्रतिज्ञामयः अपरोऽयं श्लोकः-

इषे नयाम्यहं........................ ....वधूरिदम् ॥३॥

कन्यादानविधौ वरे विष्णुत्वकल्पना वध्वां च लक्ष्मीत्व-कल्पना शास्त्रप्रसिद्धा। अत एव वरः आह—हे पूर्वव्याख्यात-प्रकारेण सुधाशने—ऽमृतभोजिनि, सुन्दरि—सुन्दराकारमयि वधु; अहं वररूपो विष्णुस्त्वां इषे—अन्नार्थम् एकं पदं नयामि इत्येषा वरकृता प्रतिज्ञा । तात्पर्यं चैतद्—आवयोर्विवाहस्य प्रयोजनमेतद् यदावामन्नवन्तावन्नादावन्नदातारौ च भवेवेति । अन्नं नात्र सर्वस्यापि भोज्यपेयलेह्यस्याहारजातस्य ग्रहणम् । इत्येवं बुभूषता भविष्यता पत्या प्रोक्ते सति भविष्यन्ती वधूरिदमाह—यच्चतुर्थेन पद्येन प्रोच्यते ।

अमृतका भोजन करने वाली ओ सुन्दरि, विष्णुरूप मैं

तुमको अन्नके लिये एक पद अपने साथ ले चल रहा हूँ। पतिके ऐसा कहने पर बहू कहती है।

O, beautiful lady, I, assuming myself to be Vishnu, the Great Lord, take this first step with you for corn. Thus asked by the husband the wife replied as follows:--

प्रथमपदे वधूराह—

तवार्जितैरन्नवरैः सुरचैः
सुपाचितैस्त्वां परितोषयामि ॥
तव स्ववर्गं च समस्तमेव
त्वदाज्ञया साधु सभाजयामि ॥४॥

इदं च प्रथम पदे वधूः प्रतिजानीतेः—
तवार्जितैरन्नवरैः .... सभाजयामि ॥४॥

त्वया अर्जितैः श्रेष्ठैरन्नैः मया च तैः सुरचितैः सुष्ठु च पाचितैस्त्वां तवाज्ञया च त्वदीयं सर्वमपि वर्गमहं परितोषयामि—अन्नादिकं भोजयित्वा सर्वानप्यहं परितुष्टान् करिष्यामीति सर्वत्रापि वर्तमानसमीपे वर्तमानवत् प्रयोगाः। अन्नादेरर्जनं तत् त्वदायत्तम् तस्य रक्षणसंस्करणादि च मदायत्तमिति भावः। सर्वेषां सेवां साधु करिष्यामि। किञ्च सदा तवाज्ञानुवर्तिनी पतिव्रतानामग्रिमा भविष्यामीत्यहं प्रतिजाने। अत्र प्रथमे पदे भूलोकजयः ध्वनितः।

पहले पदपर बहू कहती हैः—

आप जो अन्न कमाकर लाओगे उसे मैं सुरक्षित रखूँगी और भलीभाँति पकाकर आपको खिलाऊँगी। आपकी आज्ञा से आपके परिवारको भी तृप्त करूँगी।

At the firet step, the wife says:—

Yes, Sir, I will take care of the corn earned by you and satisfy you with various items of food prepared. I will be at your command to satisfy your family and thus secure a prominent place among the respectable ladies.

द्वितीयपदे वर आह—(२)
शौचाऽऽचारविचारसाधितपरीणाहेन सम्पोषितः
स्वो वर्गोऽहमपि प्रसन्नहृदयः साराङ्गयष्टिः सदा ॥
ऊर्जस्वि प्रभवामि कर्तु मखिलं राष्ट्रं स्वकीयं महत्
तस्माच्चारुदृढाङ्गशोभिनि! भुवर्लोकं मया यास्यसि ॥५॥

द्वितीयस्मिन् पदे ऊर्जे त्वेति वदन् वर एतत् प्रतिजानीते—

शौचा .... यास्यसि ॥५॥

शौचेन—शारीरादिशुद्धया, आचारेण—धर्मशास्त्रप्रसिद्धेन सदाचारेण, विचारैश्च धर्मानुकूलैः साधितेन परीणाहेन गृहस्थोपयोगिना वस्तुजातेन सम्यक् पोषितोऽहं मम च स्वकीयो वर्गोऽपि सम्पोषितः सन् प्रसन्नहृदयः - अस्माकं सर्वेषां हृदयानि प्रसन्नानि सञ्जातानि। किञ्चैतेनाहं मम वर्गश्च

सकलः साराङ्गयष्टिः—सुदृढशरीरः सन् स्वकीयमखिलं—समस्तम्, महत् विशालम्—आदक्षिणाब्धेराहिमाचलं विस्तृतं राष्ट्रमपि सदोर्जस्वि—बलप्राणवत् कर्तुं प्रभवामि। तदेव राष्ट्रं सबलं सम्भवति यत्रत्या जना बलवन्तः स्युः। तदित्थमहं स्ववर्गेण साकं सबलो भूत्वा स्वराष्ट्रमपि सबलं कर्तुं शक्ष्यामि। तस्मात्—राष्ट्रस्योर्जस्विकरणेन हेतुना। हे चारु—दृढाङ्ग शोभिनि—चारुणा—सुन्दरेण, दृढेन—शक्तिमता, अङ्गेन—शरीरेण—शोभते इति तस्याः सम्बुद्धिरियम्। हे बधू तेन पुण्येन मया साकं भुवर्लोकं द्वितीयं यास्यसि। द्वितीयपदचलनेनात्र द्वितीयलोकजयो ध्वन्यते।

दूसरे पदपर वर कहता है:—

ओ सुन्दर दृढ़ शरीर वाली, पवित्रता, आचार और विचारसे सुव्यस्थित घरकी सम्पूर्ण सामग्रीसे सम्पुष्ट मेरा परिवार और मैं प्रसन्नहृदय, बलवान् एवं स्फूर्तिमान् बन कर अपने राष्ट्रको महान् बना सकूँगा। उससे तुम मेरे साथ भुवर्लोककी यात्रा कर सकोगी।

At the second step, the husband says:—

All the refined obj ects of my household, consecrated by observing the sanctity of sentiments, mentality and conduct, are sure to make me and my family strong and happy for ever. Thus grown strong, I will be able to add to the greatness of my nation. O, lady,

charming due to the beautiful and healthy body, you shall then lead me on to the 'BHUVARLOKA'

ऊर्जे नयाम्यहं विष्णुस्त्वां चारुदृढविग्रहे ! ॥
पदद्वयमिति प्रोक्ते पत्या प्राह वधूरिदम् ॥६॥

द्वितीयस्मिन्नेव पदे वर एतदाह—
ऊर्जे नयाम्यहं .... वधूरिदम् ॥६॥

हे चारुदृढविग्रहे—सुन्दरसुदृढशरीरे ! वधु ! विष्णुरूपोऽहम् ऊर्जे—बलप्राप्तये त्वां पदद्वयं नयामि । इत्येवं भविष्यता पत्या प्रोक्ते सति भविष्यन्ती वधूरिदं प्राह—

ओ सुन्दर दृढ शरीर वाली, विष्णुरूप मैं तुमको शरीर शक्ति और प्राणशक्तिकी उन्नति के लिये दो पद अपने साथ ले चल रहा हूँ । पतिके ऐसा कहने पर बहू कहती है:—

O, healthy and beautiful lady, I, Vishnu, take this second step with you for the strength of body, character and life. Thus asked by the husband, the wife replied as follows:—

द्वितीयपदे वधूराह—

यथाबलं त्वद्गृहपारिणाह्यं
परीक्ष्य शौचादिविधानतोऽहम् ॥
ऊर्जप्रदं रोगहरं त्वदर्थे
कुटुम्बपुष्ट्यै परिसाधयामि ॥७॥

यथाबलं.............................परिसाधयामि ॥७॥

अहं यथाबलम्--बलमनतिक्रम्य—स्वशक्तेरनुसारं शौचादि—विधानतः—शास्त्रोपदिष्टैः शौचाचारविचारैस्त्वद्-गृहस्य पारिणाह्यम्—गृहोपयोगिवस्तुजातं परीक्ष्य—परित ईक्षित्वा, सम्यक् सर्वस्य क्षेमचिन्तां कृत्वा, तत् पारिणाह्यमेव—त्वदर्थे—तुभ्यं तव कुटुम्बस्य च पुष्टयै—तव कुटुम्ब मप्यूर्जस्वि कर्तु ऊर्जप्रदं—बलप्रदं रोगहरं—स्वास्थ्यप्रदं चापि परिसाधयामि—सम्पादयामि । तथा तस्य प्रबन्धं करिष्यामि यथा सर्वमूर्जप्रदं रोगहरं च भविष्यति ।

दूसरे पदपर वह कहती है:—

आपके घरकी सामग्रीको अपनी सामर्थ्यके अनुसार मैं पवित्रता आदिसे इस ढंगसे सँभाल कर रखूँगी कि वह आपके तथा आपके कुटुम्बके लिये स्फूर्तिदायक एवं आरोग्य प्रद होगी ।

At the second step, the wife says:—

Yes, Sir, I will keep the commodities of your household clean and carefully according to my capacity and reason. I will manage them so that they may give buoyance to and remove disease from you and the family.

तृतीयपदे वर आह—(३)

द्रव्यक्षेमविचारभारमखिलं दत्त्वा त्वदीये करे ।
नानोपायविधानतः स्वयमहं द्रव्याणि सम्प्रार्जयन् ।।
स्वं राष्ट्रं धनपूरितं विरचयन्नर्थज्ञधुर्ये ! शुभे !
स्वर्लोकं प्रभवामि जेतुमिह हि प्राज्ये स्वराष्ट्रे त्वया ।।८।।

अथ तृतीयस्मिन् पदे रायस्पोषायत्वेतिवदन् वरो द्वाभ्यां श्लोकाभ्यां प्रतिजानीते—

द्रव्यक्षेम .... त्वया ।।८।।

हे अर्थज्ञासु—अर्थस्य योगक्षेमज्ञासु, धुर्ये—श्रेष्ठे शुभे ! वधु ! अहं त्वदीये करे—हस्ते, द्रव्यस्य—धनस्य, क्षेमविचारस्य रक्षणस्य विचारस्य भारमखिलम्—सर्वमपि धनरक्षणोपाय-चिन्ताभारं दत्त्वा स्वयम्—आत्मना नानोपायविधानतः—नानाप्रकाराणामुपायानां विधिना द्रव्याणि—धनानि, सम्प्रार्जयन्—सम्यक् प्रकर्षेणार्जयन्; स्वयं च राष्ट्रमपि धनेन परिपूर्णं विरचयन् इह एव प्राज्ये—समृद्धे स्वकीये राष्ट्रे एव त्वया सह तिष्ठन्निहस्थोऽपि तृतीयं लोकं स्वर्लोकाभिधं जेतुं प्रभवामि—स्वर्गलोकजयोऽपि त्वत् साहाय्येन मे मत्साहाय्येन च तव-सम्भवति । एवं तृतीयपदगतिस्तृतीयलोकजयमुपलक्षयति ।

तीसरे पदपर वर कहता है:—

अर्थ शास्त्रको जानने वाली, शुभलक्षणसम्पन्न बहू जी, अनेक उपायोंसे धन कमाता हुआ मैं उसकी रक्षाका सारा

विचार भार तुम्हें सौंप दूँगा। इस भाँति अपने राष्ट्रको धनाढ्य बनाता हुआ मैं तुम्हारे साथ स्वर्गलोकको जीतने में समर्थ हो जाऊँगा।

At the third step, the husband says:—

Shifting the responsibility of the preservance of wealth into your hands, I will devote myself freely to the earning of money through various fair means. O, the leading economist, blessed lady, thus increasing the wealth of my nation and living with you in my prosperous country, I will conquer the 'SVARLOKA' (grow competent with the happiest).

रायस्पोषाय विष्णुस्त्वामर्थविज्ञे ! नयाम्यहम् ॥
पदत्रयमिति प्रोक्ते पत्या प्राह वधूरिदम् ॥६॥

तृतीयस्मिन्नेव पदे प्रतिज्ञाशेषोऽयम्—

अर्थ—धनं तत्क्षेमचिन्तां च विशेषेण जानातीति—अर्थविज्ञा। तत्सम्बुद्धिः—हे अर्थविज्ञे ! विष्णुरूपोऽहं रायस्पोषाय—धनस्य पुष्ट्यै त्वां पद त्रयं नयामि। इत्येवं पत्या प्रोक्ते सति भविष्यन्ती वधूरिदमाह—

अर्थशास्त्रकी विशेषज्ञ बहूजी, विष्णुरूप मैं तुमको धन

कीं समृद्धिके लिये तीन पद अपने साथ ले चल रहा हूँ। पतिके ऐसा कहनेपर बहू कहती है।

Lady conomist, I, Vishnu, cover this third step with you for the increase of our wealth. Thus asked by the husband the wife replied as follows:—

तृतीयपदे वधूराह—

गार्हस्थ्यसाधनसमस्तपदार्थवर्ग-
मूलं धनं विधिवदर्जितमस्ति यत्ते ॥
आयव्ययादि सुपरीक्ष्य निदेशत ते
त्वत्प्रीतये बहुविधं परिवर्द्धयामि ॥१०॥

गार्हस्थ्यसाधन..................परिवर्द्धयामि ॥१०॥

गृहस्थस्य भावो गार्हस्थ्यं, गृहस्थजीवनम्, तस्य साधनभूतो यः समस्तपदार्थवर्गः—सकलवस्तुजातसमूहः, तस्य मूलं तु धनं भवति। एवं विधं विधिवत्—शास्त्रोक्तविधानानुसारम् अर्जितं यत्ते धनमस्ति तस्य आयव्ययादि सुष्ठु परीक्ष्य—विचार्य, ते—तव, निदेशतः—आज्ञया त्वत् प्रीतये—तव प्रीत्यर्थं बहुविधं—बहुभिः प्रकारैः परितः—सर्वतः—वर्द्धयामि—वृद्धियुक्तं करिष्यामि। तथा यतिष्ये यथा गार्हस्थ्यसाधनस्य धनस्य सुमहती वृद्धिः स्यात्।

तीसरे पदपर बहू कहती हैः—

घरमें सुखपूर्वक रहनेके सब पदार्थ धनसे प्राप्त होते हैं। उचित उपायोंसे कमाया हुआ आपका जो धन होगा उसका मैं ऐसा संग्रह करूँगी कि आपको प्रसन्नता होगी। आय और व्यय आदिका ठीक मेल बैठाऊँगी और उससे आपको अवगत कराती रहूँगी:—

At the third Step, the wife says:—

Money is essential for everything in household affairs. Examining the sources of income and expenditure, I, with your consent, will manage so that the wealth, fairly earned by you, will go on growing more and more for your satisfaction.

चतुर्थपदे वर आह—(४)

संरक्षां ननु पारिणाह्यविषयां सौख्यप्रदानोद्धुरे !
नानाऽऽशंसितव तुसंग्रहधुरामारोप्य शीर्षे तव ॥
तत्तत्सौख्यनिमित्तवस्तुभरितं राष्ट्रं समृद्धं स्वकं
कुर्वन्कीर्तिमवाप्नुवन्निह महर्लोकं जयामि त्वया ॥११॥

चतुर्थे पदे मायोभवाय त्वेति वदन् वरो यद्यत् प्रतिजानीते तत्तद्द्वाभ्यां वर्ण्यते श्लोकाभ्याम्—

संरक्षां ननु.............................जयामि त्वया ॥११॥

हे प्रिये ! त्वं हि निखिलस्यापि गृहे वर्तमानस्य

वस्तुजातस्य सदुपयोगेन सर्वं इदं रचयन्ती मम जीवनञ्चैव सुखमयं कुर्वती सती सत्यं सौख्यप्रदाने उद्धुरा— सुखप्रदाने चतुरा। तथाविधे हे वधु ! यद्यदावयोः पारिणाह्यं—गृहवस्तुजातं, तद्विषयां संरक्षाम्— सम्यग् रक्षाम्, तव शीर्षे आरोप्य, किञ्च— नानाप्रकारकं यद् आशंसितम्— इष्टं, गृहे आवश्यकं, वस्तुजातं, तस्य यः संग्रहस्तस्य धरां— भारमपि तवशीर्षे आरोप्य, तत्तत् सर्वं यत् सौख्यनिमित्तं—सुखकारणभूतं वस्तुजातं तेन भरितं निजंराष्ट्रं समृद्धं कुर्वन्नह कीर्तिं—यशोऽवाप्नुवन्—प्राप्तं कुर्वन्निह—भूलोके एव वर्तमानः, त्वया—त्वत् साहाय्येन महर्लोकं चतुर्थं जयामि। त्वत्सहायतया सुखकारणानां वस्तूनां संग्रहं परिवर्धनं च कुर्वन्नहं निजराष्ट्रमपि समृद्धमवश्यमेव करिष्यामि, तेन च पुण्येन त्वया सह मे चतुर्थलोकजयोऽप्ययत्नसिद्धः। तदित्थं चतुर्थपदगतिः सुखप्राप्तये महर्लोकजयाय चेति भावः।

चौथे पदपर वर कहता है:—

सुख देनेके उपायोंको समझने वाली बहू जी, मैं अपने घरकी वस्तुओंकी रक्षा और विस्तारका भार तथा अनेक प्रकारके बढ़िया बढ़िया पदार्थोंके संग्रहकी चिन्ता तुम्हारे सिर पर छोड़ दूँगा। भाँति भाँतिके सुख देने वाली वस्तुओं से अपने राष्ट्रको समृद्ध बनाता हुआ इस लोकमें कीर्ति प्राप्त करता हुआ तुम्हारे साथ महर्लोकको जीत सकूँगा।

At the fourth step, the husband says:—

As you are expert in creating comforts, I appoint you the manager of my household

affairs and entrust you with the task of purchasing and preserving the different indispensable articles. Being relieved of the burden, I will look for the prosperity of my country and cause the exploitation of different sources of happiness. Thus increasing the wealth of my nation and gaining fame with you, I will conquer the 'MAHARLOKA'.

मायोभवाय विष्णुस्त्वां सुखविज्ञे! नयाम्यहम् ॥
चतुष्पदमिति प्रोक्ते पत्या प्राह वधूरिदम् ॥१२॥।

अयं त्वत्रैवपदेऽपरः प्रतिज्ञाश्लोकः—

मायोभवाय .... वधूरिदम् ॥१२॥

हे सुखविज्ञे—सुखं सुखीकरणोपायं विशेषेण जानातीति सुखविज्ञा । तत् सम्बुद्धिः=सुखविज्ञ इति । विष्णुरूपोऽहं मायोभवाय—सुखप्राप्तये त्वां चतुष्पदं पदचतुष्टयं नयामि ।

सुखतत्त्वको समझनेवाली बहूजी, विष्णुरूप मैं तुमको सांसारिक पदार्थोंके सुखके लिये चार पद अपने साथ ले चल रहा हूँ । पतिके ऐसा कहनेपर बहू कहती है ।

O, the Connoisseur of comforts, lady, I, Vishnu, take this fourth step with you for the collection of worldly things. Thus asked by the husband, the wife replied as follows:—

चतुर्थपदे वधूराह—

आवश्यकानि विविधानि गृहे त्वदीये
वस्तूनि यानि गृहिणां सुखसाधनानि ॥
तेषामहं समुदयं विरचय्य नूनं
त्वामात्मवर्गसहितं सुखयामि शश्वत् ॥१३॥

इत्येवं पत्या प्रोक्ते सति वधूरिदं प्राह—

आवश्यकानि .... शश्वत् ॥१३॥

त्वदीये गृहे यानि यान्यावश्यकानि—गृहस्थजीवनेऽपेक्षितानि विविधानि—बहुप्रकाराणि, गृहिणां—गृहस्थानां, सुखसाधनानि—सुखसाधनभूतानि वस्तूनि भवन्तीति शेषः, तेषां वस्तूनां समुदयम्—संग्रहरूपं संरक्षणरूपं च विरचय्य विशेषेण रचयित्वा नूनं निश्चयेन आत्मवर्गेण—तव स्वजन—समुदायेन सहितं त्वां शश्वत्—सदैव, सुखयामि—सुखिनं करिष्यामीत्यहं प्रतिजाने।

चौथे पदपर बहू कहती हैः—

घर बसाकर रहने वालोंको सुख देने वाली जितनी आवश्यक वस्तुएँ हो सकती हैं मैं उन सबका ठीक ठीक संग्रह करूँगी और परिवार सहित आपको निरन्तर सुख देती रहूँगी।

At the fourth step, the wife says:—

I will try to increase the store of those

necessary things of household which are the means of comfort and happiness in worldly life. Rest assured, sir. I will go on pleasing you and your family.

पञ्चमपदे वर आह—(५)

मेधाकान्तिबलाऽगदत्वरचनं गव्यं परं कारणं
तन्मूलं पशुवृन्दपालनमतस्त्वां तद्व्यवस्थापने ॥
वार्ताज्ञे ! विनियोज्य राष्ट्रभरणे कुर्वन् प्रयत्नं सदा
जानं लोकमहं त्वया सह पुनर्जेष्यामि शुद्धाशये! ॥१४॥

पञ्चमे पदे वरः पश्वर्थं त्वेति वदन्नेवं प्रतिजानीते—

मेधाकान्ति.......... ....शुद्धाशये ॥१४॥

शुद्धः आशयोऽन्तःकरणं यस्याः तत्सम्बुद्धिर्हे शुद्धाशये ! वार्तां पशुपालन—व्यापारकृषिप्रभृतिं जानातीति वार्ताज्ञा । तत्सम्बुद्धिः=हे वार्ताज्ञे ! वधु ! मेधायाः—धारणावत्या धियः, कान्तेः—लावण्यस्य, बलस्य—शारीरमानसादिशक्तेः, अगद-त्वस्य—नीरोगतायाः, रचनं—रचनायाः प्रधानं हेतुभूतमेतस्य सर्वस्य रचने परं कारणं हि गव्यम्—गोक्षीरमस्तीति प्रसिद्धमेव । तस्य मूलम्—कारणभूतं पशुवृन्दस्य—गोवृषभादिपशु समूहस्य पालनमेवास्तीति शेषः । अतः कारणात् त्वां तद्व्यवस्थापने—तस्य—पशुवृन्दपालनस्य व्यवस्थापने—प्रबन्धादिकरणे विनि-योज्य—विनियुक्तां कृत्वा निजराष्ट्रस्य भरणे—पोषणे सदा प्रयत्नं कुर्वन्नहं त्वया सह जानं लोकं—जन इति नामकं पञ्चमं

लोकं पुनरवश्यं जेष्यामि । त्वत् साहाय्येन पशुवृन्दपरि-वर्धनेन राष्ट्रमपि क्षीरघृतादिभरितं कुर्वन्नहं तत्पुण्येनावश्यं पञ्चमं लोकं जेष्यामि । तदित्थमियं पञ्चमपदगतिः पञ्चम-लोकजयं द्योतयति ।

पाँचवे पदपर वर कहता है:—

वार्ता (खेती, पशुपालन और व्यापार) को जानने वाली, शुद्ध विचारों वाली बहू जी, गायके घी, दूध आदि, स्मरणशक्ति, कान्ति, बल और आरोग्य के श्रेष्ठ कारण हैं और वे (घी, दूध आदि) पशुओंके पालनसे प्राप्त हो सकते हैं । इसलिये मैं तुमको उनके पालनका काम सौंप कर राष्ट्रोन्नतिके काममें जुट जाऊँगा और इस भाँति तुम्हारे साथ जन लोकको जीत सकूँगा ।

At the fifth step, the husband says:—

O, learned and pure hearted lady, as the milk and ghee of cows are very essential for brains, beauty, vigour and health, the protection of cattle are necessary. Appointing you to mind the cattle and the agricultural needs of life, I will pay heed to the development of my country and conquer the 'JANALOKA', with your assistance.

पश्वर्थं विष्णुरूपो हे वार्तांज्ञे ! त्वां नयाम्यहम् ॥
पदपञ्चकमित्युक्ते पत्या प्राह वधूरिदम् ॥ १५ ॥

प्रतिज्ञाशेषं वर इत्थमाह—

पश्वथं .... बधूरिदम् ॥१५॥

हे वार्त्ताशास्त्रं जानाने वधु ! विष्णुरूपोऽहं त्वां पशुवृन्द-प्राप्त्यर्थं पदपञ्चकं नयामीति पत्योक्ते सति वधूरिदं एवं प्रतिजानीत इति तात्पर्यम्—

वार्ताको जानने वाली बहू जी, विष्णुरूप मैं तुमको पशु-पालनके लिये पाँच पद अपने साथ ले चल रहा हूँ। पतिके ऐसा कहने पर बहू कहती है।

O, lady agriculturist, I, Vishnu, take this fifth step with you for the protection of cattle. Thus asked by the husband the wife replied as follows:—

पञ्चमपदे वधूराह—

दधिदुग्धघृतादिसाधनं
कृषिवाणिज्यनिमित्तमस्ति यत् ॥
सुखदं परमं कुटुम्बिनां
पशुवृन्दं परिपालयामि तत् ॥१६॥

दधिदुग्धघृतादि .... तत् ॥१६॥

यत् दधिदुग्धघृतादिसाधनं—दध्नः, दुग्धस्यक्षीरस्य, घृतनवनीतामिक्षातक्रप्रभृतेरनेकस्य खाद्यपेयपदार्थजातस्य

साधनमुपायभूतम् , यच्च कृषेः—कृषिकर्मणः—हलकर्षणादि-द्वारा, वाणिज्यस्य—शकटाकर्षणभारोद्वहनादिद्वारा, निमित्तं—कारणभूतं; यच्च कुटुम्बिनां गृहस्थानां कुटम्बस्य पुष्ट्या—प्यायनेन च परमं श्रेष्ठं सुखदं—सुखकारणभूतं ते तव पशुवृन्द-मस्ति, तदहं सदा परिपालयामि—तस्य परिचालनं करिष्यामीत्यहं प्रतिजाने।

पाँचवे पदपर बहू कहती है:—

जिन पशुओंसे दही, दूध, घी आदि प्राप्त होते हैं, जिनके बल पर खेती और व्यापार होता है तथा जो गृहस्थोंको बहुत सुख देते हैं उन पशुओंका मैं पालन करूँगी।

At the fifth step, the wife says:--

I must protect the cattle, which are the immediate source of curd, milk and ghee etc., which are the cause of agriculture and business; and which are extremely useful for families.

षष्ठपदे वर आह—(६)

आत्माऽयं परमो बहिर्मुखमहाऽऽनन्दाय वद्धीकृत-
स्तस्मात्त्वां परिणीय चित्तरचितं सर्वर्तु सौख्यं भजन् ॥
राष्ट्रप्रीणनतत्परं सुयशसं वंशं प्रतिष्ठापयन्
जेष्यामि प्रथितं त्वया सह तपोलोकं विशुद्धाशये ! ॥१७॥

षष्ठलोकजयसूचके षष्ठे पदे वरोऽत्र ऋतुभ्यस्त्वेति वदन्नेवं प्रतिजानीतेः—

आत्माऽयं ………………… विशुद्धाशये ॥१७॥

अयं जीवस्तु, परमार्थतः परमात्मा शिवभट्टारक एव। स एव स्वस्वातन्त्र्यस्य महिम्ना बहिर्मुखाय इन्द्रियविषय-संसर्गजन्याय महते—विशालाय, आनन्दाय जीवभावं भजन् बद्धीकृतः—कर्मजालबद्धः सन् जीवावस्थायां वर्तमानः शिव एवाह, बाह्यानन्दप्राप्तये त्वां परिणीय त्वया साकं विवाहं विधाय, चित्तरचितं—चित्तसंकल्पितं सर्वेषामृतूनां सौख्यम्—आनन्द भजन् राष्ट्रस्य निजस्य प्रीणने सन्तोषणे तत्परं—सदैवोद्यतं, सुयशसं—शोभनकीर्त्ति युक्तं वंशं—कुलं प्रतिष्ठापयन्—पुत्रादीनामुत्पत्त्या निजवंशस्य प्रतिष्ठां कुर्वन्, राष्ट्रसेवयानया पुण्यमर्जयित्वा त्वया सह प्रथितम्—अतिप्रसिद्धं षष्ठं तपोलोकं जेष्यामि। हे विशुद्धाशय इति वध्वाः सम्बोधनम्। विशुद्धः—निर्मलः आशयः—अन्तःकरणं यस्याः सा विशुद्धाशया वधूः। अन्तः करणेनात्रान्तः—करणं वृत्तिरूपाः कामनाः उपलक्ष्यन्ते। विशुद्ध कामने साध्वि वध्वितिभावः।

छठे पदपर वर कहता है:—

विशुद्ध कामना वाली बहू जी, आत्माका निवास शरीर में बहिर्मुख आनन्दकी प्राप्तिके लिये है। इसलिये मैंने तुमसे विवाह किया है। मैं चाहता हूँ कि मन-चाहे ढंगसे सब ऋतुओंका सुख भोगता हुआ ऐसे यशस्वीवंशकी प्रतिष्ठा करूँ जो राष्ट्रको सन्तुष्ट करने वाला हो। तब मैं तुम्हारे साथ प्रसिद्ध तपोलोकको जीत सकूँगा।

At the sixth step, the husband says:—

O, refined lover, lady, this worthy soul stays confined to enjoy the worldly pleasures. It follows, therefore, that I must devise ways to experience fancifully all the comfortable phases of seasons and reproduce my kind, famous and dovoted to nation. Thus establishing my generation renowned I will conquer the 'TAPALOKA' with you.

विशुद्धकामने ! विष्णुऋ तुभ्यस्त्वां नयाम्यहम् ॥
पदषट्कमिति प्रोक्ते पत्या प्राह वधूरिदम् ॥१८॥

प्रतिज्ञाशेषं श्लोकेनाह—

विशुद्धकामने ! .... वधूरिदम् ॥१८॥

विशुद्धाः निर्मलाः—धर्म्याः कामनाः—इच्छाः यस्या सा विशुद्धकामना, साध्वी प्रतिव्रता। तस्याः सम्बुद्धिर्हि विशुद्ध-कामने वधु ! विष्णुरूपोऽहं ऋतुभ्यः=ऋतुषु लभ्येभ्यः, सुखेभ्यः त्वां पदषट्कं—षट्पदानि नयामि।

बिशुद्ध कामना वाली बहू जी, विष्णुरूप मैं तुमको ऋतुओंका सुख भोगने छह पद अपने साथ ले चल रहा हूँ। पतिके ऐसा कहनेपर बहू कहती है।

O, the lover of refined taste, I, Vishnu,

cover this sixth step with you for the enjoyment of seasons. Thus asked by the husband the wife replied as follows:—

षष्ठपदे वधूराह—

अद्वैतभावमुपगम्य तवाज्ञयैव
तत्तद्-हृषीकसुखसाधनतामुपेता
सर्वेषु तेषु ऋतुषु त्वयि बद्धभावा
त्वामर्चयामि नितरां परितोषयामि ॥१६॥

इत्येवं पत्या प्रोक्ते सति वधूरिदं प्राह—

अद्वैतभाव.............................परितोषयामि ॥१६॥

त्वया सहाद्वैतभावम्—अभेदसम्बन्धम्, उपगम्य—प्राप्य तवाज्ञयैव तस्य तस्य चक्षुः श्रोत्रत्वगादेः हृषीकस्य—इन्द्रियस्य यत् सुखं तस्य साधनतां—कारणतां उपेता प्राप्ता सती, इन्द्रियजन्यं तव सुखं सम्पादयन्ती, तेषु सर्वेषु ऋतुषु त्वयि बद्धः भावो यया सा बद्धस्नेहरसाहं त्वाम् अर्चयामि—पूजयामि नितराम्—अत्यन्तं च परितोषयामि—सन्तुष्टं सुखिनं करिष्यामि।

छठे पदपर बहू कहती है:—

मैं आपके और अपने बीचमें कोई अन्तर नहीं रखूँगी। आप जैसे कहोगे वैसे ही मैं भाँति भाँतिसे आपकी इन्द्रियोंके सुखका साधन बन जाऊँगी। सब ऋतुओंमें मैं अपना प्रेम आपको दूँगी। मैं आपकी इतनी पूजा करूँगी कि सदा प्रसन्न रखूँगी।

At the sixth step, the wife says:—

Feeling one with you, with your consent, I will be the means of your enjoyment of all the senses. Throughout the seasons, I will cherish you in my heart. I will worship you and satisfy you constantly.

सप्तमपदे वर आह—(७)

सख्यं साप्तपदीनमत्र मुनयः सम्पूर्णमाहुः सदा
 तेन त्वामभिगम्य सप्तममहं लोकं जयामि ध्रुवम् ॥
मोक्षार्थं हृदयं विधाय भवती राष्ट्रस्य सम्भावने
 मामेवाऽनुगता भविष्यति तदा मोक्षो न ते दुर्लभः ॥२०॥

सप्तमलोकजयसूचके सप्तमे पदे सख्यस्य परिपूर्णताप्रतिपादनार्थं वर एवं प्रतिश्रृणोतिः—

सख्यं साप्तपदीन..............................दुर्लभः ॥२०॥

हे प्रिये मुनयः अत्र संसारे सख्यं—मैत्रीं, साप्तपदीनम्—सप्तभिः पदैः प्राप्यम्, सत् सम्पूर्णं—सर्वथा परिपूर्णम् आहुः—उपादिशन् । परस्परेण साकं सप्तपदभूमिचलनेनैव सज्जनानां मैत्री भवतीति भावः । तेनैवसाप्तपदीनेन सख्येन त्वाम् अभिगम्य—पत्निरूपेण प्राप्य, अहं ध्रुवं अवश्यमेव सप्तमं लोकं सत्यलोकाख्यं जयामि इति मे निश्चयः । भवती अपि मोक्षार्थं—मोक्षप्राप्तये, राष्ट्रस्य—स्वनिवसनभूमेः—पितृभूस्वरूपस्य पुण्यभूस्वरूपस्य च सम्भावने—सम्यग् भावने—हृदयं स्वकीयं

विधाय—स्वराष्ट्रसमुन्नतौ दत्तचित्ता सती, मामेवानुगता—अनुसरन्ती चेद् भविष्यति तदा ते भवत्याः मोक्षो दुर्लभो न भवितेति शेषः। स्वतन्त्रे परिपूर्णवैभवशालिन्येव च राष्ट्रे मोक्ष-प्राप्तिः सुलभा न पुनः परतन्त्रे विभूतिविहीने वेति भावः।

सातवें पदपर वर कहता है:—

मुनि लोग मित्रताको साप्तपदीन (सात पद साथ चलने से होने वाली) कहते हैं। इसलिये मैं भी तुम्हारे साथ उतना चलकर (वैसी मित्रता स्थापित करके) सातवें लोक (सत्य लोक) को जीत लूँगा। मोक्षकी साध मनमें बसा कर यदि तुम राष्ट्रके उन्नतिकर्मोंमें मेरे पीछे पीछे चलोगी तो मोक्ष तुम्हारे लिये दुर्लभ नहीं होगा।

At the seventh step, the husband says:—

Sages are of opinion that friendship is made by covering seven steps together. So please let me cover seven steps togethεr with you for couquering the seventh loka, 'SATYALOKA'. If you, cherishing your wish for salvation, please do follow me in responding respectfully to the needs of my nation, salvation shall not be far from you.

वध्वाः प्रतिश्रुतं ज्ञात्वा पतिः प्राहैवमुत्तमम् ॥
सखे ! सप्तपदा भव सा मामनुव्रता भव ॥२१॥

वरकृताः प्रतिज्ञाः निगमयन्नेवाचार्यवर्य्यो वरस्य प्रतिज्ञाशेषं प्रतिपादयति—

वध्वाः प्रतिश्रुतं .... भव ॥२१॥

वध्वाः प्रतिश्रुतं—प्रतिज्ञातिं स्वीकृतिं ज्ञात्वा पतिः एवम्—अनेन प्रकारेण, उत्तमम्—चरमं प्रतिज्ञावाक्यम् आह—

हे सखे ! सख्यभावं प्राप्स्यन्ति ! वधु ! सप्तपदा भव—सप्तपद—प्राप्यं परिपूर्णं सख्यभावं प्राप्नुहि, सा—एवं भूता—परिपूर्णं सख्यं प्राप्ता सती माम् अनुव्रता—अनुगता भव। ममैवानुसरणं कुरु।

बहूकी सहमति जान कर अन्तमें पति कहता है कि हे सखे, मेरे साथ सात पद वाली मित्रता (पूर्णमित्रता) प्राप्त करो तथा मेरी इच्छाका अनुकरण करने वाली बनो।

After the wife has promised all proposed so far, the husband says, at last, as follows:—

Friend, please, let us cover the seventh step together for our complete friendship. please be a constant wife (Please do make up your mind to follow me always sincerely.)

सप्तमपदे वधूराह—

प्राप्तं मया मनुजदेहफलं समस्तं
यत्सख्यमुत्तममहं भवता गताऽद्य ॥

सर्वं प्रतिश्रुतमिदं हृदये दधाना
त्वामेव पूर्णहृदयेन नु कामयिष्ये ॥२२॥

पत्युः चरमं प्रतिज्ञावाक्यं श्रुत्वा वधूरपि स्वप्रतिज्ञा एवं निगमयति—

प्राप्तं मया ……… ……………… कामयिष्ये ॥२२॥

यदहम् अद्य भवता उत्तमं—साप्तपदीनमग्निसाक्षिकं सख्यं—मैत्रीं गता—प्राप्ता, तन्मया समस्तं मनुजदेहे प्राप्यं फलं—धर्मार्थकाममोक्षरूपं प्राप्तम्—अवश्यमेवाहं सम्पूर्णं मानवशरीरफलं प्राप्स्यामीतिभावः । सर्वं चेदं सप्तसु पदेषु प्रतिश्रुतं—प्रतिज्ञातं सदैव हृदये दधाना—धारयन्ती कदाप्येतन्न विस्मरन्ती, अहं त्वामेव—न त्वन्यं कमपि पूर्णेन हृदयेन नु—निश्चयेन कामयिष्ये—तवैव कामनां यावज्जीवं करिष्यामीत्यहं प्रतिजाने ।

सातवें पदपर बहू कहती है:—

यह जो मैं आज आपकी उत्तमकोटिकी मित्र बन गई हूँ इससे मैंने मनुष्यदेहका सारा फल प्राप्त कर लिया । मैंने आपके साथ जो भी प्रतिज्ञाएँ की हैं उन सबको मनमें बसा कर मैं आपको ही पूरे हृदयसे चाहती रहूँगी ।

At the seventh step, the wife says:—

Sir, today I gained the full object of human life as I secured the highest kind of

friendship with you. I will remember the oaths just taken and adore you sincerely with my full heart.

श्रीसप्तपदीहृदयं प्रणीय शास्त्रानुकूलमर्थज्ञः ॥
वाञ्छति विश्वोद्धारं श्रीमदमृतवाग्भवाचार्यः ॥२३॥

श्रीसप्तपदीहृदयं..........श्रीमदमृतवाग्भवाचार्यः ॥२३॥

अर्थं जानातीत्यर्थज्ञः--इषे त्वेत्यादीनां सौत्राणां शब्दानां रहस्यभूतमर्थं जानानः, श्रीमान् अमृतवाग्भवाख्य आचार्यमहोदयः श्रीसप्तपदीहृदयाख्यमिमं ग्रन्थं प्रणीय विश्वस्योद्धारं वाञ्छति— न पुनरर्थादिकं स्वार्थोपहितं किमपि । तेनात्र परोपकारमात्रं प्रयोजनं ग्रन्थकर्तुः ।

शास्त्रके अनुकूल अर्थको जानने वाले श्रीमान् अमृत-वाग्भव आचार्य श्री सप्तपदीहृदयकी रचना करके विश्वका उद्धार चाहते हैं ।

Shri Amrita Vagbhavacharya, having conprehended the connotations of the script-ure and sacred writings, solicits the unive-rsal good by composing this Shri Sapta Padi Hridayam, accodring to the shastras.

षडङ्कनन्देन्दुमिते गते वैक्रमवत्सरे ॥
एकादश्यां रवौ माघे कृष्णपक्षे कृतिः कृता ॥२४॥

षडङ्कनन्देन्दुमिते............................कृता ॥२४॥

इयं सप्तपदीहृदयरूपा कृतिः--एव ग्रन्थः इति। षडङ्कनन्देन्दुमिते १९९६ इति संख्याके, इमां संख्यां गते—प्राप्ते वैक्रमेशकारिप्रवर्तिते वत्सरे एकादश्यां तिथौ रवेर्वारि, माघमासि, कृष्णपक्षे श्रीमताऽमृतवाग्भवाचार्यवर्य्येण कृता।

विक्रमसंवत् १९९६ माघ वदि एकादशी रविवारको इस कृतिकी रचना हुई।

This work was completed (by the author) on the eleventh instant, Sunday, falling in the first fortnight of the month of Magha, in the year 1996 of the Era of Vikramaditya.



श्रीः

शुद्धिपत्रम्

अशुद्ध	पृ०	प०	शुद्ध
क्षेम्णे	२	४	क्षेमाय
आचार्मे	१७	२२	आचार्य
सद्दभ	१८	१०	सद्वृत्त २
सद्दत्त	१८	२०	सद्वृभ
समस्योंका	२०	३	समस्याओंका
सद्दत्तका	२०	१८	सद्वृत्तका
सद्दत्त	२१	८	सद्वृत्त
घमार्थ	३२	१५	धर्माथं
राष्टे	३४	११	राष्ट्रे
निदेशात ते	४३	१०	निदेशातस्ते
व तु	४४	१५	वस्तु

Societ	Society	Page 8	Line 21
Speakings	Speaking	Page 10	Line 14
Firest	First	Page 37	Line 4
Conomist	Economist	Page 43	Line 3

श्रीपञ्चस्तवी

द्वितीय संस्करण प्रस्तुत है। यह प्रथम लघुस्तवकी ६०० वर्षसे भी अधिक प्राचीन संस्कृत टीका तथा राष्ट्रभाषानुवादके साथ मुद्रित है। शेष चार स्तोत्र मूलमात्र हैं। साथ ही इस संस्करणमें श्रीमहानुभवशक्तिस्तव भी दिया गया है। कागज और छपाई बहुत उत्तम है। डाक व्यय अलग

तीसरी बार **श्रीराष्ट्रालोक** छप गया

राष्ट्रभाषानुवाद-सहित

राष्ट्रवादी ही आर्य हैं आर्य ही शान्तिकी स्थापना कर सकते हैं।

भारत भारतीयोंका है

स्वातन्त्र्य हमारा जन्मसिद्ध अधिकार है। राष्ट्र हमारा पिता है, माता है, और आचार्य है। हम सदा उसके सेवक हैं। हमारा राष्ट्र हमें भोग और मोक्ष दोनों देता है।

हम सच्चे राष्ट्रिय हैं।

अभारतीय भारतके अतिथि हो सकते हैं राष्ट्रिय नहीं

हम संक्रान्तिका सदा आदर करते हैं। हमें ऐसी शान्ति नहीं ाहिये जो राष्ट्रको परतन्त्र बनाये।

राष्ट्रिय राष्ट्रके पुत्र होते हैं, पति नहीं

भारतीय अपने आपको हिन्दू माननेमें गौरवका अनुभव करते हैं। भारतीय आदर्शके विपरीत क्रान्ति किंक्रान्ति है संक्रान्ति नहीं। यदि आप इन भावोंसे स्नेह करते हैं तो "श्रीराष्ट्रालोक" अवश्य पढ़िये।

श्रीराष्ट्रालोक परम पवित्र भारतीय आदर्शोंका एक जीवन शास्त्र है

राष्ट्रप्रेमी इसका आदर कर रहे हैं। जनता हाथों हाथ अपना रही है। आप भी आज ही मँगाईये। मू० ॥) मार्गव्यय अलग

श्रीः

श्रीमदमृतग्रन्थमाला के चार पुष्पः—

१. श्रीमहानुभवशक्तिस्तवः – *संस्कृत तथा हिन्दी व्याख्या सहित मूल्य ॥)*

२. श्रीपरशुरामस्तोत्रः—*राष्ट्रभाषानुवादसहित सचित्र तृतीय संस्करण मूल्य विश्वोद्धार*

३. श्री श्रीविंशतिकाशास्त्रम्ः—*दो संस्कृत व्याख्याओं तथा एक हिन्दी व्याख्या के साथ मूल्य रु० ७५ न. पै.*

४. श्रीसप्तपदीहृदयम्ः—*संस्कृत-हिन्दी-इङ्गलिश रूपान्तरों के साथ आपके हाथों में ही है।*

अन्य प्रकाशित ग्रन्थ रत्न

१. श्री राष्ट्रालोकः– *राष्ट्रभाषानुवाद सहित तृतीय संस्करण मूल्य ॥)*

२. श्री आत्मविलासः—*"श्रीसुन्दरी" राष्ट्रभाषाभाष्य सहित मूल्य २)*

३. श्रीसंक्रान्तिपंचदशीः—*राष्ट्रभाषागद्यपद्यानुवादसहित द्वितीय सस्करण (मुद्रणालय में)*

४ श्रीमदमृतसूक्तिपंचाशिकाः—*संस्कृत तथा राष्ट्रभाषा व्याख्यासहित (मुद्रणालय में)*

५. श्रीस्वाध्यायमहिमस्तोत्रः—*(प्रकाशनीय)*

मुद्रकः—नवयुग प्रेस, भरतपुर।